शब्दों को विश्राम कहाँ

शब्दों को विश्राम कहाँ

संतोष गर्ग

समदर्शी प्रकाशन
नव-सृजन के नवीन पुष्प...

335, देवनगर, मोदीपुरम, मेरठ, उ.प्र., पिन-250001
E-mail : samdarshi.prakashan@gmail.com | Mob. : 9599323508
WEBSITE: SAMDARSHIPRAKASHAN.IN

इस पुस्तक का कोई भी अंश, कहीं पर भी, लेखिक की अनुमति के बिना उद्धृत नहीं किया जाना चाहिए।

शीर्षक	:	**शब्दों को विश्राम कहाँ**
लेखिका का नाम	:	संतोष गर्ग
प्रकाशक	:	समदर्शी प्रकाशन
प्रकाशन का पता	:	335, देव नगर, मोदीपुरम मेरठ, उत्तर प्रदेश- 250001 मोबाइल नम्बरः 9599323508
संस्करण	:	प्रथम (2021)
मुद्रक	:	समदर्शी प्रकाशन, मेरठ
आईएसबीएन नम्बर	:	978-93-91508-95-1
सर्वाधिकार ©	:	संतोष गर्ग

SHABDON KO VISHRAM KAHAN Poems Writen By- SANTOSH GARG
₹175/-

प्रिय बेटे
नितिन व बेटी सुनयना
को समर्पित

लघुकविताओं के तत्वों पर आधारित संग्रह : शब्दों को विश्राम कहाँ

इस भौतिक युग में लोगों का ध्यान पैसा कमाने में अत्यधिक है और साहित्य पढ़ने के लिए उनके पास समय नहीं है। टी. वी., मोबाइल तथा विद्यार्थियों के भारी बैगों के कारण भी वे आराम से बैठकर किसी साहित्यिक कृति का आनंद लेने में असमर्थ दिखाई देते हैं। इसलिए साहित्यकारों का ध्यान इस ओर गया है कि वे ऐसी रचनाएँ दें जो अल्प समय में पढ़ीं जा सकें और पाठकों को पूरा आनंद प्रदान कर सकें। इस समय लघुकथा का अत्यधिक प्रचलन है और लघुकविता का भी प्रचार-प्रसार हो रहा है। इन दोनों विधाओं से पाठक कम समय में बहुत कुछ ग्रहण कर सकता है।

संतोष गर्ग जी की अब तक कविता, डायरी, लघुकथा, बाल उपन्यास, बाल कविता तथा अध्यत्मिक चिंतन आदि विधाओं में 15 कृतियाँ अस्तित्व में आ चुकी हैं। 'शब्दों को विश्राम कहाँ' इस लघुकविता संग्रह में प्रत्येक लघुकविता लगभग दस पंक्तियों की है। इस लघुकविता संग्रह की यह भी विशेषता है कि इसमें 'मां' पर लगभग ग्यारह, 'शब्द' को लेकर आठ, 'वक्त' को लेकर तीन तथा 'फूल', 'रक्त' और 'मैं' पर दो- दो लघु कविताएं हैं।

'मां' में कवयित्री कहती है-

जितना- जितना मैं था रोया, माँ ने भी चुनरी भिगोई।
माँ जैसा न कोई, माँ फूट-फूट के रोई।।

संतोष गर्ग जी की माँ, प्रेम तथा देश से संबंधित लगभग सभी लघु कविताओं में भावनाओं का प्राधान्य है। इन्होंने नारी जाति को लेकर अत्यधिक लघुकविताएँ प्रदान की हैं। 'औरत' लघु कविता में देखिए-

'कभी कहाती देवी औरत, कभी कहाती पत्नी औरत। माँ, बहन, बेटी भी बनती कभी सजाती कोने औरत।।' इनकी कविताओं में मुक्त छंद है और लय-तुक का ध्यान रखा गया है। मुख्य शीर्षक शब्दों को लेकर है, इसलिए शब्दों की यात्रा, शब्दों की काया, शब्द बिन कुछ नहीं, ये तीन लघु कविताएँ भी शब्द के महत्त्व को लिए हुए हैं। इन्होंने घरेलू महिला को लेकर तथा नारी व लड़कियों पर भी लघुकविताओं की रचना की है।

संतोष जी ने लॉकडाउन, ज़रा सोचिए, वाह कोरोना, प्रकृति, कोरोना, कोविड-19 आदि लघुकविताएँ कोरोना विषय को लेकर ही लिखी हैं। इनकी लघु कविताओं में कहीं-कहीं प्रकृति चित्रण मिलता है। कविताओं की भाषा अत्यंत सरल व सजीव है। कहीं लघुकविताएँ अलंकारों से सुसज्जित हैं। कईयों में कल्पना का प्राचुर्य मिलता है और कई सकारात्मक सोच लिए हुए हैं।

इस शानदार कृति के लिए मैं संतोष गर्ग जी को बधाई देता हूँ। मुझे ध्रुव विश्वास है कि ये अति शीघ्र एक और लघुकविता संग्रह पाठकों को प्रदान करेंगी।

प्रो. रूप देवगुण
(हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला
द्वारा सम्मानित साहित्यकार)*
डॉ. गाँधी वाली गली,
13/676 गोविन्द नगर सिरसा- 125055 (हरि.)
मोबाइलः- 98122-36096

मन के सूक्ष्म भावों का सच्चाई से निरूपण करती कविताएँ

संतोष गर्ग के इस काव्य संग्रह की कविताएँ आकार में भले ही छोटी हैं पर उनमें व्याप्त चिंताएँ वास्तव में बड़ी हैं।

सामाजिक चेतना और व्यक्तिक सरोकार भी हैं। इन कविताओं में से गुजरते हुए कोमलता और नर्म घास जैसी हरियाली का आभास होता है। कुछ निहायत खूबसूरत पंक्तियाँ मस्तक में गूँजने लगती हैं। यह कविताएँ अनेक छोटे-छोटे विषयों को लेकर लिखी गई हैं।

'शब्द', 'मां', 'वक़्त' और होली पर अनेक ऐसी कविताएँ हैं जो एक ही बात को भिन्न-भिन्न पहलुओं से देखने के प्रयास में लिखी गई हैं। सामाजिक चिंता में युद्ध में शहीद हुए पिता के लिए पुत्र का प्रण कि मैं लडूँगा या सरहद पर लड़ने वाले वीर योद्धा की चिंता कुछ कविताओं का ज़रूरी सरोकार भी है। 'होली' पर लिखी कविताओं में जहाँ आनंद और उत्सव की बात है वहाँ जल को लेकर सामाजिक चिंता भी है।

कुछ कविताएँ निजी भावों- अनुभवों से छलकती हुई नज़र आती हैं, पुत्र और पति के बीच दुविधा की अंतिम सीढ़ी को पार करती पति द्वारा संभावित प्रश्रय की पक्षधर कवयित्री, 'नसीहत' कविता में अपने भावों को तीखी एवं पैन्नी भाषा में व्यक्त करती हैं।

अपने 'स्व' को पुरुष वाचक स्वर में छिपाती हुई कवयित्री बहुत सारी बातें परोक्ष रूप से कहने में सफल हुई हैं। रहस्यमई विचित्र धारणाएँ और अभिव्यक्ति कठिन होने पर अच्छी लगती हैं, पर इस शब्द विन्यास के पीछे एक तड़पन, विवशता, दुराव के आधा खुलने और आधा दबे रहने का

आभास भी होता है।

कविताएँ छोटी हों अथवा बड़ी हों, या इन्हें शब्द या मात्राओं को गिन कर लिखा जाए कवि को इस बात की चिंता करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि निज के सच को शब्दों में ऐसे बाँधा जाए कि वे सब का सब सच लगने लगे- अच्छी कविता की यही सार्थकता और शक्ति है।

कुल मिलाकर संतोष गर्ग की ये कविताएँ मनभावन हैं और मन के सूक्ष्म भावों का सच्चाई से निरूपण करती हैं।

मुझे यह कविताएँ सच्ची और इमानदार लगीं और मेरा पूर्ण विश्वास है कि यह कविताएँ पाठकों को भी अच्छी लगेंगी।

शुभम् और साधुवाद!

डॉ. कैलाश आहलूवालिया
चंडीगढ़
मोः 9888072519

अपनी लेखनी से...

देखती हूँ... मैंने 1988 से लिखना प्रारंभ किया है। तब से अब तक प्रतिदिन लेखनी चलती रहती है। सिर्फ मेरी ही नहीं पता नहीं कब से... युगों- युगांतरों से शब्दों की यात्रा आरंभ हुई है और कहीं विश्राम नहीं। पूर्ण विराम का तो प्रश्न ही नहीं उठता... सोच में, भाव में, विचार में चलते ही रहते हैं शब्द..। 'शब्दों को विश्राम कहाँ'...यह मेरा तीसरा काव्य संग्रह है।

इस संग्रह की 101 लघु कविताओं में लेखनी ने शब्द, शक्ति, वक़्त, प्रकृति, माँ, पिता, पर्वत, फूल, जल, हम-तुम, व्यवहार, कोरोना, राष्ट्र, अध्यात्म आदि विषयों को लिया है। मुझे लगता है वर्तमान काल आपाधापी का है। इस इंटरनेट युग में प्रत्येक व्यक्ति शॉर्टकट जीना चाहता है थोड़े समय में बहुत कुछ पा लेना चाहता है। इसलिए मैंने लघु कविताओं को प्राथमिकता दी है। मुझे पूरा विश्वास है पाठक इस नई सोच को अवश्य पसंद करेंगे।

मैं आभारी हूँ सिरसा हरियाणा के प्रमुख साहित्यकार डॉ रूप देवगुण जिन्होंने मुझे लघुकविताएँ लिखने के लिए प्रेरित किया और अल्प समय में अपने बहुमूल्य विचारों से अनुगृहित किया।

आभारी हूँ चंडीगढ़ के सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ कैलाश चंद आहलूवालिया जी की जिन्होंने पुस्तक को पढ़ा और आशीर्वाद देकर कृतार्थ किया।

मेरे जीवन साथी डॉक्टर एस एल गर्ग व बेटे नितिन ने भी समय-समय पर इस पुस्तक के लेखन में मुझे सहयोग दिया।

मैं समदर्शी प्रकाशन के प्रति भी आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने इस पुस्तक को निर्धारित समय पर प्रकाशित किया।

अंतस्तल की गहराइयों से कृतज्ञित हूँ... मेरे परम पूज्य गुरुदेव जूनापीठाधीश्वर आचार्य स्वामी अवधेशानंद गिरि जी महाराज की... जिनके पावन सूक्ष्म सान्निध्य के बिना मेरा प्रत्येक कार्य अधूरा है ...!

आपसे अनुरोध है कि कृपया मेरी त्रुटियों से अवगत अवश्य करवाएँ ताकि आगामी पुस्तक में कुछ सुधार कर सकूँ...।

सधन्यवाद-

-संतोष गर्ग

विषय-सूची

शब्दों की काया	15	सावन	39
पिता	16	जल	40
माँ है न	17	गेंदे के फूल	41
मैं	18	हे सखा	42
स्वेटर	19	मेरे मीत	43
नसीहत	20	मन ने कहा	44
प्रकृति	21	वक़्त	45
सपने	22	वक़्त	46
कोविड-19	23	सीमा	47
रचनाकार	24	युद्ध	48
घर	25	लॉकडाउन	49
तुम	26	प्रभु का उत्तर	50
शब्द	27	जरा सोचिए	51
औरत	28	वाह कोरोना	52
उमंगें	29	प्रकृति	53
जानती हूँ	30	प्रार्थना	54
मेरे देश	31	धरा के बन्दे	55
वह लड़का	32	पर्वत	56
कहते हैं हम	33	ऐसा होता है	57
माँ	34	माँ	59
मैं नहीं थकती	35	माँ	60
संसार	36	शब्द	61
रात	37	माँ	62
लेखनी	38	अचानक	63

मैं	64	शब्द बिन कुछ नहीं	90
नारी	65	वचनबद्धता	91
तुम्हारी याद	66	फूल	92
एक बार	67	मुस्कुराहट	93
बडा आदमी	68	माँ	94
लड़कियाँ	69	बसंत	95
कई दिनों बाद	70	माँ	96
मैं	71	तेरे शहर	97
झगड़े	72	विश्वास के फूल	98
शब्द	73	गलतफहमियाँ	99
वह लड़की	74	रक्त	100
हे प्रिय!	75	रक्त	101
उलझन	76	होली	102
शब्द	77	अधिकार	103
शब्द	78	प्रसाद	104
अपने	79	मेला	105
ताकत	80	कभी-कभी	106
माँ	81	दोस्त	107
हर कोई है	82	हे सखा!	108
घर	83	पुस्तकें	109
वक़्त	84	अहसान	110
होली	85	शहीद सैनिक का बच्चा	111
आदमी	86	मंगल भाव	112
आग	87	रिश्ते	113
शब्दों की यात्रा	88	याद	114
कभी-कभी	89	जब तुम आना	115

शब्दों की काया

शब्दों की होती है- काया
शब्द खेलते हैं शब्दों से
लड़ते हैं, झगड़ते हैं,
प्यार भी करते हैं शब्द
गुणवान हों तो कद्र भी पाते
कहीं सस्ते- कहीं
मँहगे भी होते हैं शब्द
कोई- कोई शब्द तो
खरीद लेते हैं, पूरा संसार
जैसे... हमारे ग्रंथ...।।

■■

पिता

पर्वत होते हैं पिता से
पिता होते हैं पर्वत से
जिन पर नहीं पड़ता
कोई प्रभाव
छोटी-मोटी
मार का।
उनका वज्र सा सीना,
सह लेता है बड़े-बड़े प्रहार
जो देते हैं उन्हें
उनके अपने ही।।

■■

माँ है न

बेफिक्र होकर सो जाइए...
माँ है न/ सब सँभाल लेगी...।
रात का गहन अंधेरा,
दूर कर, सूरज चढ़ा देगी
माँ है न ... सब सँभाल लेगी।
जो भी देखेगा अच्छी नज़र से
दिल से दुआ देगी...
बुरी नज़र वाले को
सबक सिखा देगी...
माँ है न... सब सँभाल लेगी...।।

■■

मैं

'मैं' ने हाथों को शीश झुकाया, मन को शीश झुकाया।
गंगा में झुककर स्नान किया, शिव पर जल चढ़ाया।
यमुना, सरस्वती, कृष्णा, कावेरी, शिप्रा, नर्मदा,गोदावरी
सरयू , महानंदा, अलकनंदा, सबको शीश झुकाया।
मंदिरों में माथा टेका, सतगुरु को शीश झुकाया।
चारों धाम, चारों कुंभ, अनेक तीर्थों पर,
जहाँ-जहाँ गई मैं, शीश झुकाया।
स्वयं धरा पर रह- रह कर झुक झुक के सब कुछ
पाया।।
सबका मान बढ़ाया,
कुछ नहीं घटाया..।।

■■

स्वेटर

जब मैं छोटी थी, माँ ने मेरे स्वेटर बुने
बहन- भाइयों के, रिश्तेदारों के बुने
तब बाज़ार से नहीं खरीदे जाते थे स्वेटर
मेरे बच्चों ने भी पहने उनके बुने स्वेटर
अब बच्चों के बच्चे भी पहनते हैं वही स्वेटर
जब भी मिलती माँ, सँभाल कर रखने को कहती...
धरोहर की भाँति अलमारी में अब भी धरे हैं स्वेटर...
माँ मर गई ... उसकी उम्र से भी ज्यादा ...
पीढ़ी दर पीढ़ी, चलेंगे स्वेटर
माँ के बिना... अब कोई नहीं बुनता स्वेटर...।।

■■

नसीहत

मुझे नहीं रहना, ऐसे व्यक्ति के घर
जो मुझसे ज़्यादा करता हो अपनी माँ की परवाह...
रह लूँगी मैं अपने बेटे के सँग
वह मेरा अधिक अपना है
जान देता है मुझ पर...
ऐसा ही किया मैंने...
कई वर्षों बाद, विदेश में
रहते- रहते समझ आया
तुम ग़लत नहीं थे
मुझे रहना है सिर्फ... तुम्हारे घर।।

■■

प्रकृति

कुछ रास्ते, सजाए जाते
नकली फूलों और बंदनवारों से
कुछ सज जाते
इंद्रधनुषी, अद्भुत नज़ारों से।
नकली ताम-झाम चँद पलों की
दिखता- चुभता अहम् उनका।
असली... प्रकृति, करती अपना श्रृंगार
स्वयं ही...।
बचकर रहती वो, नकली कलाकारों से ...
तभी तो लगती वह, मनमोहिनी।।

■■

सपने

कुछ सपनों की आदत डालें
छोटे नहीं बड़े ही पालें
दो-चार हों, मर जाते हैं
दस-बीस भी, डर जाते हैं
उनमें भी कुछ सड़ जाते हैं
संकल्प यदि हो, नभ के जितना
पचपन को ही पर लगते हैं
मरुस्थल की तपती धरा पर
होंठ फटें या पड़ जाएँ छाले
कुछ सपनों की आदत डालें।।

■■

कोविड-19

कोविड-19 ने, छीन लिए स्कूल
छीने रिश्ते-नाते,
मनोरंजन व अर्थ के
साधन भी लिए छीन ...
पहने मास्क, रखी दूरियाँ
फिर भी मिला भय, आशंकाएँ
संग- संग अकेलापन...
रह गए ठूँठ से हाथों में मोबाइल
दो घड़ी के लिए, स्वयँ पर नज़र जो गई ...
आईने ने देखा, आँखें भी कोटरों में धँस गई...।।

■■

रचनाकार

कोरोना क्या आया
सब रचनाकार
ऑनलाइन हो गए...
अपना नगर
रिश्ते-नाते छोड़कर
देश-विदेश चले गए
भूल गए गाँव की भाँति
अपना घर...
घूम आए पूरा विश्व
ऑनलाइन/ मोबाइल पर...।।

■■

घर

तेरे घर मैं आऊँ कैसे...
आईने को सजाऊँ कैसे
कंकर- पत्थर भरे पड़ें हैं
भाव मन के सड़े पड़ें हैं
सागर सुख का पाऊँ कैसे
तेरे घर मैं आऊँ कैसे...
नख से शिख तक ऐंठ गई हूँ
लगता जैसे बहुत बड़ी हूँ
गर्व की भीत गिराऊँ कैसे
तेरे घर में आऊँ कैसे..।।

■■

तुम

तुम जो थोड़ा साथ दे दो
हाथ में अपना हाथ दे दो
छम- छम, छम बजेगी पायल
करेगी मेरे दिल को घायल
होंगे अपने सूरज व चंदा
पावन मन जैसे हो गंगा
दिन में सपने देखूँ तेरे
रहती हरदम पास तूँ मेरे
मेरे घर तू आए जैसे
माँग सिंदूर सजाए जैसे..।।

■■

शब्द

शब्द बड़ा ही प्यार हैं देते
कभी-कभी दुलार भी देते
नफ़रत हैं देते कभी तो
कभी-कभी अंगार भी देते।
भूत-भविष्य में जब उलझते
बड़ी मुश्किल से तब सुलझते
रहते युगों-युगों से देते
बदले में ये कुछ ना लेते
फेरों के जब बंधन बंधते
तब सुंदर सी नार हैं देते।।

■■

औरत

कभी कहाती देवी औरत
कभी कहाती पत्नी औरत
माँ, बहन, बेटी भी बनती
सभी सजाती कोने औरत।।
इन नामों को जीने हेतु
घूँट अमृत के पीने हेतु
फटा कलेजा सीने हेतु
गीत प्रेम के गाने हेतु
अपार स्नेह लुटाने हेतु
चाहती औरत एक पुरुष को।।

■■

उमंगें

उमंगों के किस्से उमंगों की कहानी है
उमंगों के सहारे बीते ज़िंदगानी है।
अपनी ज़मीन है अपने ही सबके हिस्से
उमंगों को रखना आदत पुरानी है।
उमंगें ही उड़ाती, उमंगें ही गिराती
धरती से अंबर उमंगें पहुँचाती।
जितनी हो चादर, हों उतनी उमंगें
वर्ना तो जीवन में ठोकर ही खानी है।
अपने ही अपनों को देते हैं धोखा
'संतोष' उमंगों पर फिरता जो पानी है।।

■■

जानती हूँ

जानती हूँ तुम चाहते हो मुझे...
पर कहते कुछ नहीं
मैंने भी धार लिया है मौन व्रत...।
होता है एहसास, कुछ-कुछ
मेरी भी यादें सताती हैं तुम्हें...।
वर्ना- ये निर्मोही आँखें
बादलों की भाँति यूँ न बरसती।
मर्यादाओं की भाषा न समझाती।।
तेरे मिलन को चातक जैसे
यूँ न तरसती।।

■■

मेरे देश

तुम्हारी फिक्र होती है
मेरे देश !
तू किसी का बुरा नहीं करता
करना तो दूर की बात
सोचता तक नहीं
फिर क्यों
क्यूँ तेरे अपने ही देकर धोखा तुझे
करते हैं छेद
तेरे दिल में ...
मेरे प्यारे देश... ! !

■■

वह लड़का

जिस लड़के की किस्मत में
एक थैली भी नहीं
वह लड़का
दूध की 8 थैली लिए
प्रसन्न मुद्रा में
रोज़ निकलता है
मेरे घर के सामने से
कानों में ईयर फोन लगाए
मस्ती में संगीत सुनते
कह जाता है मुझे
'राम राम जी !'

■■

कहते हैं हम

बहुत कष्ट सहता है जब कोई जीवन की नैया में...
तब कहते हैं वह राम जैसा है...
जब सब कुछ त्याग कर करता है कोई धर्म की रक्षा
तब कहते हैं वह कृष्ण जैसा है...
जब कोई दीवानी महलों के सुख त्याग कर पी जाती है
जहर का प्याला तब कहते हैं वह मीरा जैसी है
जब कोई पगली प्रभु की बाट जोहते हुए विधि-निषेध
भूल जाती है तब... तब कहते हैं हम शबरी जैसी है
जब कोई जानवर जान पर खेलकर बचाता है किसी
मानव को...तब कहते हैं वह इंसान जैसा है।।

■■

माँ

माँ जैसा ना कोई, माँ फूट-फूट के रोई
पहली बार बुखार हुआ था वह भी 104 हुआ था
माँ मेरी ने कुछ ना खाया, जीना भी दुश्वार हुआ था
मोती से गिरते थे आँसू जब तोड़े आटे की लोई
रात- रात भर जगती रहती टिक कर वह बिस्तर ना सोई
माँ जैसा ना कोई, माँ फूट-फूट के रोई
चलना सीखा धीरे-धीरे चारपाई के तीरे-तीरे
जब-जब मैं धड़ाम से गिरता हृदय माँ का धक्-धक् हिलता
जितना-जितना मैं था रोया, माँ ने भी चुनरी भिगोई
माँ जैसा ना कोई, माँ फूट-फूट के रोई।।

■■

मैं नहीं थकती

सब थक जाते हैं पर मैं कभी नहीं थकती।
सुबह उठकर झाड़ू लगाती हूँ
चंद बर्तन करके नाश्ता बनाती हूँ
सब को विदा करके रसोई संभालती हूँ
बेटी जाती है कंपनी में वह भी थक जाती है... पर मैं...
कपड़े धोकर प्रेस करने बैठती हूँ
कभी फोन तो कभी गेट को देखती हूँ
सब्जी खरीदते बेटा थक जाता है पर मैं...
मैं घरेलू महिला हूँ जॉब नहीं करती
दूध बनाती हूँ दही जमाती हूँ सभी मजे से देखते हैं टी.वी.
मैं काम निपटाकर सेज सजाती हूँ सब थक जाते हैं पर मैं...।।

■■

संसार

गाँव वालों को शहर क्यूँ भाता है
शहरियों का गाँव से क्यों नाता है
होटल वाले चाहते घर के जैसा
घर के कहते बना होटल जैसा
मक्की की रोटी सरसों का साग
मिले जो शहर में आए गाँव याद
इस चंचल मन को कौन समझाए
बहुत हैं उलझे, थाह न पाए
सच कभी तो झूठ, ना जाने कैसा
जैसे लूँ मैं सपने, नहीं ज़रा सा वैसा...।।

■■

रात

चुपके से आती है रात
संग मेरे सो जाती रात
होता नितांत अकेला मैं
जरा नहीं घबराती रात
न कोई सज्जा न श्रृंगार
अपार स्नेह लुटाती रात
सादगी उसकी ग़ज़ब ढ़ाए
जब नज़र मिला मुस्काती रात
जलती है दीए संग बाती
मिटकर रवि उगाये रात।।

■■

लेखनी

धोखा देती है लेखनी
न जाने कब चलते-चलते
दिल-धड़कन की भाँति
बंद हो जाए यह लेखनी...
बच कर रहना, रहना सतर्क...
नहीं तो समंदर की भाँति
उफनते विचारों का पुलिंदा
वापिस चला जाएगा।
एक नहीं, कई-कई रखना लेखनियाँ
बचे रहना इनके धोखे से।।

■■

सावन

हरी चूड़ियाँ, हाथों पर मेहंदी
माथे टीका, कानों में झुमके
पीली चुन्नर, लाल है साड़ी
पाँवों बिच्छुए, हीरा-मुंद्री
आलता लगाए, पाजेब छनकाए गोरी मुस्काए
पाँव के नाखून से धरा खुदाए
बेल की ओट में, खड़ी शर्माए
पेड़ देखता जाए..
श्रावण मास, पवन है बहती
'संतोष' है कहती।।

■■

जल

जल बचाना है सबसे ज़रूरी
इसके बिना हर बात अधूरी
देते संदेश सभी बुद्धिमान
रखते नहीं फिर क्यूँ कर ध्यान
हो जाए अगर नलों की मुरम्मत
तब ही कोई निकले समाधान
आओ रोकें जल की बर्बादी
मुफ्त मिली जो अमूल्य आज़ादी
कीमत भारी बूंद-जल की
कुछ तो सोचो ! बच्चों के कल की।।

■■

गेंदे के फूल

सबका मन चुराते, ये गेंदे के फूल
लंबा साथ निभाते, ये गेंदे के फूल
कभी घर द्वार की, शोभा बढ़ाएँ
कभी कहीं ये आँगन सजाएँ
बगीचों में भी ये मुस्कुराएँ
अपने कुल को बढ़ाते जाएँ
पत्ती-पत्ती... और बिखर जाएँ
अंतिम दम तक ये स्नेह पाएँ
भले ही जमे इन पे, कितनी ही धूल...
सदा मुस्कुराएँ... ये गेंदे के फूल।।

■■

हे सखा

उड़ती हूँ मैं, आजकल आसमान में
अहंकार से भरी-पंख फैलाती
यश वैभव दिखलाती, फिरूँ इठलाती।
सुनो! जरा तो, चाहती हूँ मैं
तुम 'पर' काट दो मेरे
विरह-बंधन में, बाँधों-सांझ-सवेरे।
आज़ाद पंख नहीं लगते अच्छे,
भाव हैं सच्चे...
चहुँ ओर फिरें लुटेरे
हे भोले सखा मेरे!

■■

मेरे मीत

तुम मेरे हाइकू, तुम्हीं मेरे चौका
तुम्हीं हो ताँका
तुम्हीं हो सैदोका
तुम्हीं मेरी कविता
तुम्हीं हो ग़ज़ल
गीत तुम्हीं हो, तुम्हीं हो सजल
हर शै, है बस
तेरी ही तेरी
ओ हाँ मेरे मितवा !
है ज़िंदगानी तेरी..।।

■■

मन ने कहा

चलो ! आज एक अच्छा काम करें
खुलते ही आँख
उन्हें प्रणाम करें..।
माता-पिता जो
पड़े एक किनारे
पास जा कर उनके
संवाद करें
सुबह गर बीत गई
सार्थक शाम करें
चलो आज ! अच्छा काम करें... !!

■■

वक़्त

वक़्त बहुत बलवान है
टिक- टिक करता
भागता है चला जाता
इसका न रंग, न रूप, न आकार
फिर भी दिखता है साकार।
जहाँ भी उलझे कोई मोह में
छीन लेगा यह सारा आनंद
देगा कभी खुशियाँ, कभी ग़म
फिसल जाते वक़्त के हाथों धीरे-धीरे,
जीवन के शत्- वर्ष।।

■■

वक़्त

संभलें- संभलें- संभलें हम
डरें, वक़्त की करें कदर
कौन बदल देता है
हमारे संकल्पों को विकल्पों में
घोंट देता है विश्वासों का गला
फेर देता है आशाओं पर पानी।
रखें निगरानी, रखें निगरानी...।।
करें अनुशासन का पालन
तभी होगा स्वयं पर शासन
होगी जीत हमारी...।।

■■

सीमा

धैर्य की सीमा, होती है जिनकी राई के दानों जितनी
वह तुरंत चाकू की नोंक की भाँति शब्दों से,
करते हैं प्रहार
बहुतों की नज़रों में वे, अच्छे नहीं होते...।
कुछ की होती है अनंत,
वह सह-सह कर प्रहार, तीखे बाणों के
रहते हैं मौन
भीतर ही भीतर बुनते रहते हैं
भूत-भविष्य का जाल
राजनीति खेलते, वह अच्छे लोग
होते हैं बहुत, खतरनाक...।।

■■

युद्ध

युद्ध, सिर्फ तीर तलवारों से नहीं लड़े जाते
न ही बम बंदूकों से लड़े जाते हैं युद्ध
तलवार जैसे तीखे बोलों से,
उत्तर- प्रतिउत्तर प्रहार करके
बेवजह दूसरों को सता- सता कर,
उनके हक छीनते हुए
क्रोध के अतिक्रमण से, लड़े जाते हैं युद्ध।
युद्ध सिर्फ तीर तलवारों से नहीं लड़े जाते
शहरों, देशों की सीमाओं पर तो बिल्कुल भी नहीं
अपने ही घर में, अपने ही भीतर मौन रहकर
भूत भविष्य से उलझते,
स्वयं से भी लड़े जाते हैं... युद्ध।।

■■

लॉकडाउन

क्यों डरते हो लॉकडाउन से यह कोई हौवा नहीं,
घर में रहें सिर्फ संचेतना है हमारी सुरक्षा के लिए
लॉकडाउन में देखो तो, न मेहमान की चिंता
न घंटी बजने की, न गेट की ड्यूटी...
ज़रूरत का सामान उपलब्ध है, काहे की चिंता...
सहज भाव में पढ़ना- लिखना, ध्यान- योग, समाधि
जीवन में जो नहीं कर पाए,
अब करने का अमूल्य उपहार... लॉकडाउन
प्रत्येक कलाकार को मिला अद्भुत अवसर... जो,
दादी-नानी की कई पीढ़ियों ने नहीं देखा...।।

■■

प्रभु का उत्तर

मैंने पूछा प्रभु से-
''क्या तुम भी प्रतिशोध लेते हो...?
तुम तो पिता हो पूरी सृष्टि के
क्या तुम भी दिखाते हो अपना रौद्र रूप...?''
''हाँ-जब-जब होती है धर्म की हानि
छीनी जाती है लाल चुन्नरिया, पृथ्वी का फटता है कलेजा...
पर्यावरण होता है प्रदूषित/तब लगती है आग मेरे भीतर!
कि विनाश कर डालूँ भूकंप की भाँति पूरी दुनिया का...
जो करते हैं बुरा उन्हें सबक सिखाता हूँ...।
हित चाहने वालों को छोड़ भी देता हूँ... हाँ! मैं प्रतिशोध लेता हूँ...।।

■■

ज़रा सोचिए

कोरोना के दिन हैं
शब्दों की भीड़ मत कीजिए
उतना लिखिए जितना योग्य हो
बेफ़िजूल काग़ज़, काले मत कीजिए...
तेज़ बहाव में बह रहे
कचरे भरे विचारों को, रोकिए...
दिमाग़ रूपी छलनी से,
छान कर सोचिए...।
सबके हित के लिए पढ़ना ज़रूरी है-
अथवा पढ़ाना।।

■■

वाह कोरोना

वाह कोरोना वाह कोरोना
क्या- क्या रंग दिखाए
दिन रात बस तेरी चर्चा
पीछा कौन छुड़ाए।।
कहीं तू कविता बनकर आया
कहीं कहानी, कहीं ग़ज़ल
सैनिटाइजर के भी किस्से
कहीं मास्क का रोना।।
ग़ज भर दूरी रखो भाई!
वैक्सिन तक पड़ेगा ढोना...।।

■■

प्रकृति

प्रकृति हमें कोरोना के रूप में कुछ कह रही है...
हम समझ नहीं रहे।
सनातन सत्ता, परंपराओं के रूप में
समझा रही है, हम समझ नहीं रहे।
हम हो गए, घर से दूर, रिश्तेदारों से दूर।
भाव संवेदनाओं को दे दी तिलांजलि
उड़ा रहे हैं स्वयं ही अपनी संस्कृति का उपहास।
पूरी दुनिया को यह वायरस बता रहा है-
चेतना ला रहा है, कोरोना के रूप में
हम समझ नहीं रहे अब भी, अम्मा- दादी की बातें।।

■■

प्रार्थना

यह भोजन नहीं सिर्फ प्रसाद है
जैसा भी है बहुत ही स्वाद है
मिलता है सिर्फ प्रभु प्रेमियों को ही
गुरुवर प्यारे का धन्यवाद है।
ऐसा है- वैसा है, आँकलन न कीजिए
जब मिले, जहाँ मिले, हाथ जोड़ लीजिए
छोड़ना न झूठा कभी एक कण भी
कभी-कभी जीभ को अस्वाद दीजिए
बिन कृपा न मिलता इसका कोर भी
'संतोष' हाथ जोड़ती, संतों की आवाज़ है।।

■■

धरा के बन्दे

धरा के बंदे
धरा की बातें करते हैं
धरा के बंदे उस ईश्वर से डरते हैं
चुप रहना है फितरत उनकी
धरा के जैसी नम्रता उनकी
मुश्किल मिलती सोहबत उनकी
बिना बात के टाँग अड़ा कर
नहीं किसी से लड़ते हैं...
धरा के बंदे धरा की बातें करते हैं
धरा के बंदे बस ईश्वर से डरते हैं...।।

■■

पर्वत

कभी पर्वतों के घर जाया करो।
ढेरों आशीर्वाद पाया करो।।
लव यू लिखो या हेट यू लिखना
थोड़ा वक़्त तो उन पर लगाया करो।।
तराशोगे तो मिलेंगे भगवान भी
यूँ दर-दर न ठोकर खाया करो
बहुत चोटें खाकर बने हैं वो पर्वत
यूँ ही सितम न उन पर ढाया करो।
अगर हो चाहते संतोष धन पाना
तो ताल से ताल मिलाया करो...।।

■■

ऐसा होता है

जब हम घमंड से जाते हैं फूल
नहीं परवाह करते
दाएँ- बाएँ आगे- पीछे,
ऊपर- नीचे की
गिरते हैं धड़ाम से...
औंधे- मुँह...।
चखते हैं जब
धरा की धूल
हो जाते हैं कूल...।
ऐसा होता है... कभी-कभी...।।

■■

मेरे कान

न जाने क्यूँ, आजकल
बहुत बजते हैं, मेरे कान
सुनती हैं इन्हें इधर-उधर की
बिन सिर पैर की बातें बहुत।
जो सुनना है, समझना है
जो आएगा, अंत समय में काम
जिस पर नहीं लगता कोई दाम
बस- उसी को तजते हैं...।
न जाने क्यूँ, आजकल
मेरे कान, बहुत बजते हैं...।

■■

माँ

बहुत याद आती है माँ इन दिनों...
लंबा अर्सा हुआ उससे मिले हुए...।
हाँ! फोन पर करती हूँ , बातें कभी- कभी
पूछती हूँ भाई- भतीजों का हाल...।
माँ भी एक-एक नाम ले कर
लेती है मेरे परिवार की सुधि...।
फिर भी- औपचारिकता निभाने से
बावली 'संतोष' का पेट नहीं भरता
माँ की छाती से लग जाने को
इस छाती का मन करता...।।

■■

माँ

कोरोना के दिन, माँ देती है फोन पर हिदायतें बहुत
कहती है, 'मुँह सिर लपेट कर रखना बेटा !
बाहर कहीं इधर-उधर मत जाना
बस ! अपनी कुँडी लगाकर, घर में बैठे रहना
बहुत बड़ी महामारी है ये 'कोरोना'
...देखी जाएगी...।'
इतना कहते ही छूट पड़ा, माँ का रोना...।
सही शब्दों में, डरती है पच्चासी वर्षीया माँ...
फिर भी लपेट- लपेट कर 'संतोष' से
बातें करती है 'देवकी' माँ...।।

■■

शब्द

शब्द कहाँ सो पाते हैं सुकून की नींद
चलते ही रहते हैं
भावों में, विचारों में
गूँजते रहते हैं भीतर- बाहर।
छपते वेद- ग्रंथों में
इन्हें विश्राम कहाँ
बहते रहते हैं गंगा- यमुना की भाँति,
तटों से लगाव कहाँ...।
शब्दों की अनंत है माया
कोई समझ न पाया।
पूर्ण विराम कहाँ ... !!

■■

माँ

माँ एक संत, माँ एक ग्रंथ
माँ एक यात्रा है आरंभ से अंत की...
जो पकड़ कर उँगली चलना सिखाती
गिरना- उठना, उठकर फिर चलना
दौड़ना सिखाती माँ... !
अच्छे बुरे का भेद बताती माँ...
गर्मी में ठंडक का,
ठंड में गर्मी का एहसास दिलाती माँ...
माँ... माँ... माँ गुरु, परमात्मा
रब्ब है मेरी माँ...।।

■■

अचानक

अचानक ही चंद, दिनों के खेल में, माँ गई मर...
किसी से नहीं ली कोई सेवा
स्वयं ही करती रही सबका उम्र भर...
बाँट दिए उसने सभी बच्चों में
अपने हिस्से के बर्तन, गहने, घर,
माँ ने नहीं खाई, ठोकरें दर-दर...
खानदानी मकान में रही उम्र भर
वहाँ से उठी अर्थी, जहाँ आई दुल्हन बनकर
मृत्यु के समय भी, नहीं था उसके मन में डर
उसने बनाए जन-जन के मन में अनेक घर...।।

■■

मैं

बहुत झाँकती हूँ, मैं दूसरों की ओर...
भूत-भविष्य में उलझी
करती रहती हूँ
उनकी गलतियों का मंथन...
कभी-कभी कहती हूँ
बुरा-भला भी...
आज तो सुबह के सुनहरे पलों ने
चुपके से कहा-आसान है बहुत
औरों के दोष देखना कभी
अपने भीतर झाँक ज़रा...।।

■■

नारी

शक्ति का अवतार है नारी
सृष्टि का आधार है नारी
इस बिन सब कुछ सूना-सूना
उजड़ा घर बहार है नारी
क्यों कहते हो इसको अबला
हर घर का सुधार है नारी
लड़ती है जो आखिर दम तक
दुर्गा की तलवार है नारी
कान लगाकर सुन लो सारे !
बड़ी ही पैनी धार है नारी।।

■■

तुम्हारी याद

चाहती हूँ... भेज दूँ तुम्हें...
खुशबूओं का टोकरा...
गर्मा-गर्म फुल्के...
घी शक्कर के संग...
और भाग कर आऊँ, सुनूँ
तुम्हारे गम की बातें...
अफसोस! अफसोस!!
मेरे पास न समय है... न वस्तु...
तुम्हें देने को... कुछ भी तो नहीं
इन... दुआओं के सिवाय।।

■■

एक बार

जानते हो ! जब बहुत व्याकुल रहता था मन
तब ब्रह्ममुहूर्त वेले
कहा था ध्यान में तुमने
'मैं आऊँगा तेरा प्रेमी बनकर'
बहुत खुश हुई थी मैं
उम्मीद नहीं थी... पर तुमने वचन निभाया...
मेरे, मरे हुए, एहसासों को छुआ... न जाने क्यों/ मुझे
विश्वास न हुआ...
जानते हो तुम प्रभो !
हुआ था एक बार ऐसा...।।

■■

बड़ा आदमी

बड़ा आदमी कुछ नहीं कहता
सब कुछ है जानता मगर
मौन की चादर तान
ऊँच-नीच सहता।
छूने देता/ अहम् के परों को
शिखर की चोटियाँ...
स्वयं झुक-झुक कर
धरा पर रहता...।
बड़ा आदमी
कुछ नहीं कहता...।।

■■

लड़कियाँ

लड़कियाँ, सुंदर वरदान, अति गुणों की खान
भाई की जान, प्रगति की पहचान
मुरली की तान, चारों धाम
जल पिलाएँ, प्यास बुझाएँ
आँगन में, गुनगुनाएँ, लड़कियाँ...
महकती फुलवारियाँ... मारती किलकारियाँ
इन बिन सूनी, पलकों की अटारियाँ
लड़कियाँ, 'संतोष' की कविता, दुष्यंत की ग़ज़ल
पल में जीवन देतीं बदल
गल का हार कँवारियाँ, लड़कियाँ...।।

■■

कई दिनों बाद

माँ घर आई है
सुख-संतोष लाई है
देहरी अब होगी साफ
दाना-पानी चलेगी बात
कुत्तों को मिलेगी रोटी
बदलेगी अब किस्मत खोटी
चम्पा के फूल खिलेंगे
रुद्र-पात झूम उठेंगे
मिलते पानी जी पड़ेगी
तुलसा जो मुरझाई है... माँ घर आई है ...।।

■■

मैं

मैं, अपनी ही नज़रों में, सही नहीं होती
नियम लेती हूँ, दवा रोज खाऊँगी
मन की मीठी-बातों में भूल के न आऊँगी...
इस बार तो लिया है, पक्का प्रण...
कुछ भी हो, कैसे भी निभाऊँगी
बारह बजे से पहले ही सोजाऊँगी
मोबाइल पर रखूँगी, तीर सी नज़र
उठते ही धरा को, शीश झुकाऊँगी
संकल्प में न आने दूँगी विकल्प
'संतोष' की नज़रों में सही कहाऊँगी...।।

■■

झगड़े

झगड़े अक्सर हो जाया करते हैं
परिवार, समाज, राष्ट्र में
जहाँ शाँति है, होगी वहाँ अशाँति भी।
बिलोने लगोगे इन्हें, निकलेंगे विनाश के अंश।
मक्खन के रूप में...
हाँ! मारोगे अगर, क्षमा रूपी
ज्ञान- विवेक का हथौड़ा
तो बाँहें फैलाए
मैत्री रूपी पुल
तैयार मिलेगा...।।

■■

शब्द

अच्छे शब्द लगते हैं- अच्छे, बुरे शब्द लगते हैं- बुरे
सारा खेल है- शब्दों का
तभी तो- कहा किसी ने
''अच्छा सुनें, अच्छा बोलें''
सिर्फ पैसों का नहीं
व्यापार होता है शब्दों का भी
जैसा करते हैं हम, वैसा पाते भी हैं
पढ़ेंगे अच्छा तो लिखेंगे भी
बोएँगे अच्छा तो काटेंगे भी
जीवन होगा अच्छा तो बाँटेंगे भी।।

■■

वह लड़की

चौथी मंजिल पर खड़ा देखता हूँ मैं
पड़ोस की छोटी सी लड़की को
घर के आँगन में, उचक-उचक कर
ऊँची बँधी तार पर, कपड़े डालते हुए...
कई बार के घोर परिश्रम के बाद
आखिर उसने डाल ही दिए
गर्म स्वेटर सुखाने के लिए
कौन कहता है पहली बार में
हार मान लेती हैं लड़कियाँ...
बार-बार के अथक प्रयास से
जीतते हुए देखा है मैंने...
उस लड़की को...।

■■

हे प्रिय !

हे प्रिय !
ये दिल जैसे मेरे लिए धड़कता है
ये आँख जैसे मेरे लिए फड़कती है
ये हाथ जैसे छूने को होते हैं आतुर
मन जैसे पगला होता है व्याकुल
कलम जैसे लिखती हैं विरह के गीत
लोगों को दिखती है अपनी यह प्रीत
पाँव जैसे भागते हैं मेरी ओर
क्या ऐसा देश के लिए...
होता है किसी भोर... ?

■■

उलझन

मैं, कभी करने लगती हूँ सिलाई
मन भागता है तो करती हूँ पढ़ाई
कभी सँभालती हूँ बिखरा हुआ घर
कभी करने लगती हूँ , खुद से लड़ाई।
धार्मिक कर्तव्य भी निभाने होते हैं मुझे
सामाजिकता से भी पीछे नहीं हट पाती मैं
न जाने क्यूँ, भावों में बह जाती मैं
आखिर क्यों नहीं टिक कर, बैठ पाती मैं
छटपटाता है मन, नहीं रहेगा तन
लंबी है बातें, भाग रहे हैं दिन...।।

■■

शब्द

शब्द देखते हैं, शब्द बोलते हैं
कुछ कहने से पहले, तोलते हैं
शब्द रोते हैं, शब्द हँसते हैं
खेलते हैं कभी तो, नाचते हैं
सुर- ताल- लय में जब भी गाते
भरी सभा में सम्मान हैं पाते।
शब्द मारते, शब्द ही तारते
गिरते- उठते शब्द सँभालते
कहीं किसी का दिल दुख न जाए
कुछ कहने से पहले... सोचते हैं
शब्द देखते हैं, शब्द बोलते हैं।।

■■

शब्द

जीने का सहारा बनते हैं शब्द
चप्पू कभी नैया, बनते हैं शब्द
बीच भँवर डूबो, किनारा हैं बनते
बहुत चिंता अपनी करते हैं शब्द।
लंबी दूरी तय कर-कर के
कान में अमृत घोलते हैं शब्द
बहुत बल रखते राई से शब्द
जीने की कला सिखाते हैं शब्द
जब हाथ लगता जीवन का सत्य
हँसकर मरना सिखाते हैं शब्द।।

■■

अपने

गैरों पे भरोसा क्या करें
दे रहे अपने धोखे हैं।
उनके रंग हैं फीके मगर
अपनों के रंग तो चोखे हैं
गिरगिट की ज्यूँ रंग बदलते
ढंग ही उनके अनोखे हैं
खून के रिश्ते आज के युग में,
जी रहे कर- कर समझौते हैं।
न जाने क्यूँ मेरे इस शहर में
हो रही बे-आई मौतें हैं।।

■■

ताकत

ताकत सिर्फ
फल, मेवा, पनीर में नहीं होती
यादों में, वादों में, प्रेम-प्यार में भी होती है
कहने में, सुनने में, शब्दों में,
वाणी में भी होती है
आदेश में, संदेश में, व्यक्तित्व में,
कृतित्व में भी होती है
आचरण में, सदाचार में
क्रियाचार में, विचार में...
हाँ! बहुत ताकत होती है
व्यक्ति के व्यवहार में...।।

■■

माँ

तपती धूप में, छत पर थककर सोई माँ...
जैसे ही धूप ढलने लगी, तेज हवाओं की सर्दी से,
काँपने लगी।।
सात वर्षीय बेटी, पहनाने लगी माँ को मोजे
पाँच वर्षीय बेटा, ओढ़ाने लगा शॉल
एक- एक उंगली पकड़कर
दोनों ने उठाया माँ को... माँ ने लगाया गले...
अब (25 वर्ष बाद)
माँ स्वयं ही रखती है अपना ध्यान...
पर... कभी-कभी, जब काँपती है ठंड से
तब... बहुत याद आते हैं वह विदेशी बच्चे...
जो पहनाते थे माँ को मोजे और शॉल...।।

■■

हर कोई है

'कोई तो है' नहीं
हर कोई है
जो हमें देखता है,
सुनता है, समझता है
हाँ! कुछ- कुछ
कहता भी है
यदि हम, देख सकें
सुन सकें, समझ सकें
और महसूस कर सकें
आनंद ले सकें उसकी कृपा से...।।

■■

घर

मेरे सपनों का घर
बहुत छोटा है
द्वार पर स्वस्तिवाचन, हरि ॐ, राम राम
आँगन में महकता, तुलसी का पौधा है
मेरे सपनों का घर बहुत छोटा है
सुंदर सी बहू, बिटिया चौका चुल्हा सँभालती
पंछी, गाय, जानवरों को, अन्न दाना डालती
सुख-चैन की छत तले
हर कोई सोता है
मेरे सपनों का घर बहुत छोटा है...।।

■■

वक़्त

वक़्त है चलता अपनी चाल
वक़्त कोई ना सकता टाल
पकड़ थका मानव बेचारा
नहीं वक़्त का मिला किनारा
पास खड़ा जो हँसता देखे
वक़्त सभी के लिखता लेखे
सोच समझ जो करते बात
वक़्त मिलाए उनसे हाथ
हाथ वक़्त के सौंपो डोर
वक़्त सा मीत न कोई और।।

■■

होली

तिलक से होली मनाएँगे, थोड़ा सा जल बचाएँगे
जिन्हें बूँद भी मिल न पाती, उनकी प्यास बुझाएँगे
देखी है रंगों की वर्षा, जन -जन अब तो जल को तरसा
आज यदि हम समझ ना पाए, कल को फिर पछताएँगे
तिलक से होली मनाएँगे, थोड़ा सा जल बचाएँगे
बूँद-बूँद की बचत भारी, बूंद से ही खिलती फुलवारी
जब आएगी बूँद की खुशबू , फूले नहीं समाएँगे
नल-कूप अब घटने लगे हैं, जंगल भी अब कटने लगे हैं
यदि धरा पर रहा न पानी, तड़प-तड़प मर जाएँगे
तिलक से होली मनाएँगे, थोड़ा सा जल बचाएँगे।।

■■

आदमी

कहने भर को, होता है अकेला आदमी
पर घिरा रहता है हमेशा भीड़ में...
रहते उसके साथ दस- बीस आदमी
उनमें से एक उँगली पकड़े रखता हर पल
इसी कारण भीड़ में गुम नहीं होता आदमी
वही आदमी खाता- पीता पहनता संग-संग
उलझाए रखता भूत- भविष्य के जाल में
वही आदमी सिखाता है जीने का ढंग
वही ले जाता संहार की ओर,
वही बताता ज़िंदगी... कहाँ शुरू कहाँ ख़त्म।।

■■

आग

चूल्हे की आग, अँगीठी की आग
हुक्के की आग, हारे की आग
तन की आग, मन की आग
जेठ में तपते सूरज की आग
भ्रष्टाचार, मँहगाई की आग
चहुँ और जल रही आग,
इतनी भयानक नहीं होती
जितनी क्रोध की आग,
अपना-पराया सब भुला दे
तीनों लोकों को जला दे
और... अंत में...
स्वयं को भस्म बना दे...।।

■■

शब्दों की यात्रा

शब्द से शब्द जुड़ते हैं
तब बनती है मोतियों की भाँति
शब्दों की माला
जब बोला जाता है शब्द
तब सुनते हैं कितने लोग
पढ़ते हैं तो गुनते हैं कितने लोग
व्यवहार में लाते हैं कितने लोग...
एक शब्द पैदा करता अनेक शब्द
शब्दों का बन जाता संसार
भीतर रहते कितने लोग।।

■■

कभी-कभी

हो जाता है कभी-कभी
प्यार उस पर्वत से,
जो नहीं होता
कहीं किसी के काम का
पर कोई एक
बैठ उस बरगद के चरणों में
पा लेता है अमूल्य निधियाँ...
और बन जाता है
दुनियाँ का
सबसे बड़ा अमीर आदमी।।

■■

शब्द बिन कुछ नहीं

कोई-कोई शब्द होते हैं- उत्साह भरे
कोई व्याकुलता भरे
कोई अभिमान भरे, गिरते- पड़ते
तीखे- पैने, गोल- मटोल,
रहस्य भरे... कौन है जो
शब्दों को पढ़ना नहीं चाहता
शब्दों के बिना, लेखक,
कवि- कलाकार कैसा...
पूरे विश्व की हलचल शब्दों से
तभी तो शब्द को कहा गया ब्रह्म,
सबके भीतर बोलता है शब्द...
शब्द के बिना कुछ नहीं... कुछ नहीं।।

■■

वचनबद्धता

आऊँगी, आऊँगा वचनबद्धता
कभी-कभी कई रंग दिखा जाती है
दिन भी विस्मरण करा देती है, वचनबद्धता...
भूल- भुलैंया में डाल देती है वचनबद्धता, समय से
पहले ही पहुँचा देती है, रखो चाहे कितनी चौकसी
होनी-अनहोनी भी करवा देती है- वचनबद्धता
कभी-कभी अज्ञानियों की भाँति, कदम बढ़ाती,
कई शँकाएं पैदा करती, तेज रफ्तार चलती
बुद्धिमान को बेवकूफ भी बना देती है- वचनबद्धता
कितनी शिक्षाएँ दे जाती है, वचनबद्धता।।

■■

फूल

फूल, जो है अपने अंतिम पड़ाव में
ज़रा सी छुअन से, न जाने...
कब बिखर जाए
हो कर पत्ती- पत्ती...
वह भी -पास रखता है अपने
अधखिली सी अनेक कलियाँ
शायद... नहीं खोना चाहता
किसी मानव की भाँति,
अपना अस्तित्व...
छोड़ना चाहता है वह... धरा पर
अपनी कई निशानियाँ...।।

■■

मुस्कुराहट

आज की, तनाव भरी ज़िंदगी में
मुस्कुराहट है, सबसे बड़ा गहना
इस कुदरत की नियामत का
नहीं है कोई मूल्य...
इस अमूल्य उपहार पर
सभी का अधिकार बराबर
बना सकते हैं इससे...
पूरे विश्व को अपना...
इस गहने के दान से
कोई बड़ा दान नहीं।।

■■

माँ

माएँ होती हैं बस ऐसी ही, हिसाब लगाती रहती हैं
पैसा नहीं लगने देती, त्याग भाव से रहती हैं
लग जाए जो कोई बीमारी, पिसती रहती सारी-सारी
भीतर-भीतर दर्द छिपाती, कभी नहीं डॉक्टर के जाती
बस मौन में रहती हैं..माँएँ होती हैं ऐसी ही...
बेटे की चिंता, बेटी की चिंता चिंता दादू-दादी की
बुआ की चिंता, फूफे की चिंता, चिंता बहना-भाभी की
चिंता की जब बिंदी हटती, सरिता की यूँ बहती हैं... माँएँ...
लोक लाज का घूँघट पहने, प्रेम-प्यार के लादे गहने
जीते जी राख बन जाती हैं... माँएँ होती हैं ऐसी ही...।।

■■

बसंत

अंग बसंती, रंग बसंती, ढंग भी आज बसंती है
डोर के संग पतंगें उड़ती, मौसम आज बसंती है।।
पीली-पीली सरसों के संग, सैन भी आज बसंती है।
पुस्तक की जो ओट में झाँकें, नैन आज बसंती हैं।।
कुदरत ने ताजा फूलों से, धरती का श्रृंगार किया।
भँवरों ने कलियों को छुआ, प्रेम भरा मनुहार किया।।
कहीं-कहीं तो कुछ दुष्टों ने घूँघट तार-म-तार किया।
कहीं धर्म के रूप में देखो, कान्हा ने अवतार लिया।।
वसन बसंती, सपन बसंती, रैन भी आज बसंती है।
देखो तो 'संतोष' को आया, चैन भी आज बसंती है...।।

■■

माँ

माँ तू कितनी अच्छी है
लगता जैसे बच्ची है
निर्मल मन मोती के जैसा
सोचूँ कितनी सच्ची है
भोर भए तू जल्दी-जगती
ईश्वर जैसी मूरत लगती
क्यों ना पूजूँ चरण मैं तेरे
जब देखूँ तू मौन ही रहती
दादा-दादी, बुआ, पापा
सबके मन की सुनती है...।।

■■

तेरे शहर

मैं तेरे शहर आऊँगा रोज़
तेरी मर्जी, मिलना न मिलना
तेरी सड़कें खुशबू देती
दिल की अर्जी, मिलना न मिलना
पेड़ के पीछे खड़ा हूँ कब से
कितनी सर्दी, मिलना न मिलना
कभी फोन न मैसेज करती
हे खुदगर्जी ! मिलना न मिलना
घूँट 'संतोष' के पी लूँगा मैं
आहें फर्जी, मिलना न मिलना।।

■■

विश्वास के फूल

किसी भी कार्य को
आरंभ करना,
होता है कितना कठिन
जानता है वही,
जो खरपतवार निकालकर
सौंधी- सौंधी माटी में,
स्नेह के बीज बोता है
अंकुरों को देख-देख
फूला नहीं समाता
रातों को जाग-जाग,
प्रेम-नीर बरसाता है
नहीं जमने देता कभी,
शंकाओं की धूल
तब कहीं जाकर खिलते...
विश्वास के फूल...।।

■■

गलतफहमियाँ

मैं
मूर्ख हूँ
मूर्ख ही रहने दो...
...तो अच्छा है
जानते हो-
ज्ञान की गलतफहमियाँ
अच्छे भले
कमाते- खाते विद्वान को
अपने ही घर में
गूंगा- बहरा बना देती हैं...।।

■■

रक्त

मेरी माँ, मुझे
रक्त नहीं देने देती
पर जानती है
मैं रक्त देती हूँ
वह एक माँ के दर्द से
अन्जान नहीं...।
इसलिए-सिर्फ, टोकती है
रोकती नहीं... क्योंकि
वह.. माँ है, जानती है...
एक बच्चे की जान की कीमत...।।

■■

रक्त

दे दी दो बूंदें रक्त की तो क्या हुआ
जीवन एक को दिया तो क्या हुआ
मर गया अगर कोई एक भी अभाव में
बूँद- बूँद नहीं दी तो फिर क्या दिया
अन्न-धन कोई बड़ी बात नहीं होती
कपड़े और मकान करामात नहीं होती
हँसते-हँसते बचा लो किसी के प्राण
रक्तदान से बढ़कर सौग़ात नहीं होती
सरहद पर जो बैठे जवान
बढ़ाएँ कैसे उनका सम्मान
कुछ और नहीं है पास
हमारे रक्तदान से करें सम्मान।।

■■

होली

होली का त्यौहार
क्या करेगी उसके लिए
रँगों की बौछार
जिसका प्रियतम
निभा रहा कर्तव्य
शहर के उस पार...
माँ- बहन, भाई, पत्नी
सबको लगे उसके बिन
अलूना सा...
होली का त्यौहार।।

■■

अधिकार

जीवन में उतना बोलिए
जितना अधिकार है
अधिकार से ज़्यादा
बोलेंगे... तो कहलाएँगे
चोर, हत्यारे...
अधिकारों की मर्यादा में
रहने वाले
छू लेते हैं आसमाँ...
धरती पर आ जाते हैं, तोड़ने वाले
रहें हमेशा- अधिकारों की सीमा में।।

■■

प्रसाद

प्रसाद सिर्फ हाथों में ही लेकर नहीं चखा जाता
प्रसाद को पीते भी हैं नज़रों से, कभी-कभी
अमृत समझ कर पीया जाता है जल की भाँति
कभी इसका ज्ञानामृत
पीया जाता है कानों से
नाक को छूती है जब इसकी सुगंध
तब भी चला जाता है स्वाद भीतर तक...।
है प्रसाद पवित्रता का प्रतीक
कभी-कभी व्यक्ति
स्वयं ही बन जाता है... प्रसाद।।

■■

मेला

विश्व के लोगों का एक जगह
मिलन ही होता है मेले का नाम
भाँति-भाँति के लोग एक ही जल में
डुबकी लगाकर, करते दान
कैसे-कैसे
कहाँ- कहाँ से चलकर आते
तन-मन-धन करते समर्पण
आनंद पाते।
देवों का वे ऋण चुकाते... पाते सम्मान...
यही तो है भारतीय संस्कृति
सभ्यता की पहचान...।।

■■

कभी-कभी

कभी- कभी खुशी में संगीत सुना जाता है
खुश होने के लिए
मिलता है सुकून, झूमता है मन
ग़म में सुना जाता है संगीत
ग़म दूर करने के लिए
पर- नहीं होता ग़म दूर...
ग़म अपनी जगह,
संगीत अपनी जगह
संगीत से भी नहीं दूर होती उदासियाँ ...
बनी रहती हैं खामोशियाँ...।।

■■

दोस्त

कुछ दोस्त...
अकेला छोड़ देते हैं
मुख मोड़ लेते हैं
बरसों पुरानी
यारी तोड़ देते हैं
क्योंकि - तुम
गिरगिट की तरह
रंग नहीं बदलते
नकली...
चाल नहीं चलते...।।

■■

हे सखा !

जाने कौन सी माटी के बने हो तुम सखा !
रोते भी नहीं, हँसते भी नहीं
गुमसुम से ताकते रहते हो
बुरा-भला कहती हूँ, सह लेते हो
पलटकर कभी जवाब नहीं देते हो
वार पे वार सहते हो तुम सखा !
जाने कौन सी...।।
थक जाती हूँ जब वश नहीं चलता
लोहे की भाँति देखती, अहम् को गलता
दबे पाँव आँखों के कोरों से,
बहते हो तुम सखा !
जाने कौन सी माटी के बने हो
तुम सखा !

■■

पुस्तकें

एक तरफ गहने, दूसरी तरफ पुस्तकें
गहनों ने किया, तन का श्रृंगार
पुस्तकों ने मन का
बँध गए गहने, लॉकर के बँधन
आज़ाद रही पुस्तकें
अहम् दिया गहनों ने, रहम किया
पुस्तकों ने
गहनों ने बुद्धि को, जड़ किया
पुस्तकों ने जीवन
गढ़ दिया।।

■■

अहसान

तुमने मुझे क्या-क्या दिया, जानती हूँ मैं
दिए हुए गुच्छों को पहचानती हूँ मैं
तन्हा बैठकर इस जीवन को जब छानती
बस तुमको हितकर अपना, मैं मानती
पकड़कर उँगली चलना सिखाया
गिरी हूँ कभी तो झटपट उठाया
काँटे चुभे थे पाँवों में जब
मरहम लगाया तुम्हीं ने तब
तेरी हर देन है जीवन मेरा
भूलूँ अहसान मैं कैसे तेरा ।।

■■

शहीद सैनिक का बच्चा

मैं लड़ूँगा, मैं लड़ूँगा
ए वतन ! तेरे लिए
दिल दिया है जान दी है
पापा ने तेरे लिए...
मेरी माँ दर्द है सहती
पापा के बिन चुप है रहती
जब मैं पूछूँ कोई सवाल
नैनों से इक नदिया बहती
मुझसे देखो वचन लिया है
मम्मा ने तेरे लिए... मैं लड़ूँगा, मैं लड़ूँगा...।।

■■

मंगल भाव

शुभ हों सातों वार आपको,
खुशियाँ मिलें अपार
प्रेम का सूरज उदय हो मन में
जुड़ें प्रभु से तार, आपको...
काम आपके कभी न अटकें
विषयों में मन कभी न भटके
वक्त की पड़े न मार, आपको...
धर्म के गहने पहनों ऐसे
पिया की खातिर दुल्हन जैसे
करती सोलह शृंगार
आपको खुशियाँ मिलें अपार...।।

■■

रिश्ते

रिश्तों की जो चाहते खूशबू
अहम् को घर के आले रखना।।
सुनते रहना सबके मन की।
अपनी ज़ुबां पे ताले रखना।।
वृद्धावस्था की लाठी को।
अपने आप सँभाले रखना।।
उनके संग गुरबत करने को।
कुछ तो पास में छाले रखना।।
'संतोष' ग़मों की मार के बुक्कल।
अपने शौक निराले रखना।।

■■

याद

उसकी याद में...
जल में कंकर फेंकते... मैंने कहा-
तेरे सिवा कोई नहीं मेरा...
इन शब्दों को जैसे ही कुदरत ने सुना
तुरंत बाहें फैलाते हुए कहा-
मैं हूँ ना... इधर देख !...
सारी की सारी, हूँ तुम्हारी
बिना कोई इकरार किए...
मुझे एक बार अपना
बना कर तो देख...।।

■■

जब तुम आना

जब तुम मुझसे मिलने आना
शिकायतों का पुलिंदा
वहीं छोड़ आना...
न कुछ कहूँगी मैं
न तुम दोहराना
टपकें जो बूँदें
उन्हीं में नहाना
झुक जाऊँ जब मैं धरा सी
पकड़ कर हाथ
नभ सा हो जाना...।।

■■